पानी रे पानी तेरा मोल कितना

मदन गुप्त
संयुक्त सचिव,
गृह-मंत्रालय (राजभाषा विभाग), नई दिल्ली

हर वर्ष देश में हजारों लोग प्राकृतिक आपदाओं के कारण असमय ही काल कवलित हो जाते हैं। पीने के मीठे पानी की कमी इन मौतों का एक कारण है। लू की तपन और प्यास न बुझा पाने की बेबसी बच्चे, जवान, बूढ़े व्यक्तियों को भारी पड़ती है। क्या किया जाये? क्या संभव है? जो संभव है उसे करने दिया जायेगा क्या?

संभव तो सब कुछ है। सब कुछ किया जा सकता है। भारत में इतना मीठा पानी है कि प्रत्येक भारतवासी और साथ ही उनके पालतू पशुओं की प्यास आसानी से बुझायी जा सकती है। देश की आबादी की तुलना में देश में उपलब्ध मीठा पानी बहुत अधिक है। इतना पानी अकेली गंगा नदी से प्राप्त किया जा सकता है। आवश्यकता है इस विषय पर नितान्त अपने नजरिये से सोचने की। इसके लिए दुनिया के अन्य देशों या अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों की ओर निहारने से कुछ नहीं होगा। आदमी प्यासा का प्यासा रहेगा और योजनायें उसे मात्र दिलासा देती रहेंगी। इसलिए राष्ट्रीय स्तर पर विचार-विमर्श, चिन्तन, मंथन और मंत्रणा करके इस बारे में निर्णय करना ही होगा। ऐसा करना संभव भी है और आवश्यक भी।

संभव इसलिए कि भारत के शासन तंत्र की यह नीति सदियों से पालन होती आई है कि राज्य का अहम् काम कुएं खुदवाना, प्याऊ लगवाना, पेड़ लगवाना और मार्ग में यात्रियों की सुविधा और सुरक्षा के लिए विश्राम स्थल स्थापित करवाना आदि है। ऐसे ही निदेश आधुनिक भारत के संविधान में भी निर्दिष्ट है। अगर हम लोगों को पीने का मीठा पानी भी मुहैया नहीं करवा सकते हैं तो हमारे अस्तित्व का कोई औचित्य ही नहीं रह जाता है। इसके लिए हजारों करोड़ रूपये की लागत से बड़ी-बड़ी परियोजनायें बनाने की आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता है उपलब्ध जल को निशुल्क और सशुल्क निर्बाधित रूप से कमी वाले क्षेत्रों तक पहुंचाने की। इसके लिए योजना बनाई जानी चाहिए, जिसके लिये जल आपूर्ति विशेषज्ञ अगर पहल करें तो स्वागत योग्य होगा।

इसके लिए राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का अपने देश की समस्यायें अपने तरीके से सुलझाने वाला दर्शन अपनाना होगा। फूड-ग्रेड (अर्थात् भोजन रखने के योग्य) प्लास्टिक के दस-दस लीटर के बर्तनों में भर कर यह पानी गंगा तथा अन्य नदियों तथा जल स्रोतों से भरकर रेल या सड़क मार्ग से पानी की कमी वाले इलाकों में पहुंचाने की व्यवस्था करनी होगी। बोतलों में पानी बेचने वाली कम्पनियां ऐसा करके दोनों हाथों से बेबस जनता को लूट कर धन बटोर रही हैं। गंगा जैसी नदी का जल सालों बिना किसी रसायन के पीने योग्य रहता है। साथ ही इनके सही वितरण के लिए स्वस्थ प्रशासनिक प्रणाली अपनानी पड़ेगी, जिससे आर्थिक, आपराधिक, स्वार्थों वाले तत्व व्यवस्था को नष्ट न कर सकें।

ऐसा शारीरिक शक्ति का उपयोग करके भी किया जा सकता है। लोग पैदल भी इस पानी को गंतव्य तक ले जा सकते हैं। ऐसा विचार आपको हास्यास्पद लग सकता है किन्तु ऐसा हो रहा है दूसरे क्षेत्रों में। जल के संबंध में ऐसा धार्मिक आस्था वाले लोग करते हैं जो गंगाजल को कांवड़ियों में रखकर हरिद्वार से देश के चारों कोनों में ले जाते हैं। यह धार्मिक नहीं प्रशासनिक व्यवस्था के लिए किये गये चिंतन का परिणाम है। निष्कर्ष यह है कि आवश्यकता पड़ने पर मीठा

जल कंधों पर लाद कर लाइये, चाहे कितनी ही दूर क्यों न जाना पड़े। और ऐसा करते हुए कष्ट का विचार न कीजिये बल्कि एक अनुष्ठान के पूरा होने का आनन्द लीजिये। आज की तरह तेजी से दौड़ने वाले न तो वाहन उपलब्ध थे तब और न जल निगम ने जन्म लिया था। देश का अधिकांश ग्रामीण और अर्धशहरी क्षेत्र आज भी इसी स्थिति में जी रहा है। तो कम से कम पानी की कमी से, गर्मी की मार से, तो प्राण नहीं त्यागने पड़ेंगे। जो ला सके वो खुद ले आये वरना लाने वाले लोगों को रोजगार मिलेगा। सूखा राहत, अकाल या बाढ़ पीड़तों को भी तो सहायता पहुंचाने के लिए मजदूरी का काम दिया जाता है। लाखों लोगों को स्वस्थ और स्थाई रोजगार उपलब्ध हो जायेगा। आज नलों से पानी पहुंचाने के कारण देश के ऐसे करोड़ों लोगों का रोजगार छिन गया, जो विश्वसनीय जल आपूर्ति पारम्परिक तरीके से कर रहे थे। जिनको दूसरा कोई रोजगार हम उपलब्ध न करा सकें उनसे उनका रोजगार छीन लेना सामाजिक अन्याय है। एक ऐसे देश में जहां अशिक्षा, पिछड़ापन, ग्रामीण इलाका (जिसमें बंजर, पथरीला, रेतीला इलाका भी शामिल है) अभी सैंकड़ों वर्षों तक ऐसा ही रहेगा। हमारी सोच अपनी होनी आवश्यक है। थोड़े बहुत पारम्परिक रोजगार के साधन छीन कर हम गरीबों को केवल अति गरीब बना रहे हैं, गरीबी बढ़ा रहे हैं। भले ही एक छोटे से तबके के धनोपार्जन के कारण आंकड़ों के बल पर हमारी प्रति व्यक्ति आय लगातार बढ़ रही हो।

जहां तक पैदल चल कर पानी पहुंचाने की बात है इसी प्रकार के काम दूसरे आर्थिक क्षेत्र में आज भी हो रहे हैं। एक राज्य विशेष में देखा गया कि कोयला खदानों से सिर पर और साईकिल पर (साईकिल पर कुल 2-3 क्विंटल) रख कर सैंकड़ों मील दूरस्थ पश्चिम बंगाल सहित, अन्य क्षेत्रों में नियमित रूप से ढोया और बेचा जाता है। व्यवस्था इतनी सुसंगठित और सुव्यवस्थित है कि कहीं कोई असाध्यता नहीं है। कानून बनाने वाले इन मौखिक कानूनों के बल पर चलने वाली व्यवस्था को देख कर विस्मित से अपनी कानून बनाने की प्रक्रिया के बारे में गुमसुम से हो जाते हैं। यह यात्रा सैंकड़ों मील लम्बी है। गरीब मजदूरों की एक श्रृंखला इसे कर रही है। न कोई लाईसेंस, न परमिट, न रायल्टी की देनदारी, न सेल टैक्स का झंझट न चुंगी चौकी का भुगतान। इस व्यवस्था में हजारों लोग लगे हैं। हमारा लक्ष्य इसके विपरीत जनहित के लिए है कि लोगों की शारीरिक शक्ति का सुव्यवस्थित और विधिवत उपयोग करके हम कम से कम पीने का पानी हर भारतवासी को मुहैया करा सकते हैं। जो खरीद सकता है उससे पैसे लो, जो निर्धन या बेरोजगार है उसे सरकार मीठा पीने का पानी मुफ्त मुहैया कराये। जैसाकि होता आया है प्याऊ लगवा कर। हर व्यक्ति को केवल पीने का सीमित पानी दिया जाये। उसका दुरूपयोग दण्डनीय अपराध हो। यह पानी किसी अन्य काम में न लाया जाये - जैसे नहाने, कपड़ा धोने, बागवानी, धुलाई करने या जानवरों को नहलाने आदि।

इसके साथ ही गंगा जैसी नदियों तथा अन्य मीठे जल स्रोतों में किसी प्रकार की गंदगी न डालने दी जाये। म्यूनिसिपल वेस्ट, हास्पीटिल वेस्ट और गंदे नालों का पानी, इण्डस्ट्रियल एफ्ल्यूएंट को इनमें डाला जाना बंद किया जाना चाहिए। इस काम में इतनी ही सख्ती करनी चाहिए जितनी उच्चतम न्यायालय ने दिल्ली में प्रदूषण दूर करने के लिए की थी जब पैट्रोल-डीजल बसों के स्थान पर सी.एन.जी. बसें चलाया जाना आवश्यक कर दिया। इससे दिल्ली में फैल रहे जहरीले प्रदूषण पर नियंत्रण पा लिया गया। दिल्ली वाले फिर कुछ सांस लेने लगे। पर यह जिम्मेदारियां सरकार की हैं। यह अच्छे निजाम की तस्वीर है। कुशासन का एक ही प्रमाण काफी है कि लोग और शासन तंत्र नदियों में गंदे नालों का पानी डाल रहे हैं। नदियों को या कुओं को पवित्र

कर या उनकी पूजा करके न तो कोई धर्म संस्कार पूरा होता है और न कहीं कोई स्वर्ग मिलता है। बस यहां का नरक ही स्वर्ग बन जाता है क्योंकि बिना पानी के सब सूना है और जो बिन पानी के है वो निरर्थक है, चाहे मोती या माणिक हो या चून (आटा)। मीठे जल के स्रोतों के प्रति समाज का इतना ही स्वस्थ और मजबूत दृष्टिकोण होना चाहिए, जिससे कोई व्यक्ति अपने स्वार्थ के लिए उसे खराब न करे, प्रदूषित न करे। व्यक्ति स्वार्थ में समाज का भला भूल जाने की गलती करता है, पर समाज के व्यवहार के चलते उसे सही रास्ते पर चलना पड़ता है। यही सामाजिक व्यवहार परम्परा कहलाता है। जो लोग परम्पराओं पर चोट करते हैं वो परम्पराओं के बारे में अज्ञानी भी हो सकते हैं। पर समाज चाहे तो अभी भी इस महान देश के बहुमूल्य मीठे जल संसाधनों को सहेज-सम्हाल कर रख सकता है। सदियों तक हम इस जल से जीवन पा सकते हैं और अपनी प्यास बुझा सकते हैं। दुनिया के मीठे जल की कमी वाले (डेफीसिट राष्ट्र) देश समुद्र के पानी को साफ करके पीने योग्य बना रहे हैं और एक हम हैं कि अपने सारे मीठे जल को समुद्र का जैसा खारा और साथ ही गन्दा भी बना रहे हैं। यह सब तुरंत रूकना चाहिए। हम जंगलों की रक्षा के लिए फारेस्ट गार्डों की नियुक्ति करते हैं पर नदियों-तालाबों-झीलों की सुरक्षा के लिए कोई सुरक्षा कर्मचारी नियुक्त नहीं है। पारम्परिक शासन व्यवस्था में यह काम निषादराज या केवट या उन्हीं की तरह के पदाधिकारी करते थे। ये इन जल स्रोतों पर निगरानी रखते थे। किसी भी अनहोनी घटना की सूचना सक्षम राज अधिकारी को देते थे। इस कारण जल को अपवित्र करने का दुस्साहस कोई नहीं करता था। आज जल संसाधनों के लिए सुरक्षा कर्मी नियुक्त होने चाहिए।

इसके साथ एक अन्य कदम भी शीघ्र उठाना जरूरी है। वह है कि डिटर्जेंट से कपड़े धोने के लिए मीठे पेयजल का प्रयोग प्रतिबंधित कर देना चाहिए। एक लीटर डिटर्जेंट को साफ करने के लिए 3000 से 5000 लीटर तक मीठा पानी नष्ट किया जा रहा है। घटिया डिटरजेन्ट ज्यादा पानी मांगता है। साथ ही इससे भू-जल के स्रोत कुप्रभावित होते हैं। नदियों के जल को भी यह खराब करता है। देश में लाखों किलो डिटर्जेंट की खपत हर साल होती है। कितना मीठा पानी नष्ट करता है ये डिटर्जेंट। इसी प्रकार के अन्य सभी कैमीकल्स (रासायनिक द्रव्य) भी पानी को खराब न करें इसकी व्यवस्था करनी होगी।

ऐसे तो इन जटिल और गंभीर मामलों में विशेषज्ञों की राय ही चलती है परन्तु कभी-कभी आम आदमी के साधारण से सुझाव भी लाभकारी होते हैं। आर्थिक दृष्टि से इस प्रकार की व्यवस्था में एकबारगी धन लगाना होगा यानि इन्फास्ट्रक्चर इन्वेस्टमेंट। फिर व्यवस्था स्व-वित्त पोषित साबित होगी। इससे स्थायी रोजगार उपजेगा। पीने के पानी की किल्लत खत्म होगी। व्यर्थ के संयंत्र और लम्बी चौड़ी वाटर सप्लाई लाईनें नहीं डालनी पड़ेंगी। बिजली घर नहीं बनाने पड़ेंगे। न ही बिजली बेजा ही खर्च करनी पड़ेगी, न बिजली बनाने के लिए कोयला फूंकना पड़ेगा। यह व्यवस्था कोयले के भंडारों के समाप्त हो जाने के बाद तक चलती रहेगी। आदमी सूरज पर अधिकार नहीं कर पायेगा। न यह धरती छोड़कर किसी अन्य ग्रह पर जाकर बस सकेगा - गया भी तो यहीं लौटने की तमन्ना लेकर लौटेगा। इसलिए जीवन प्रदान करने वाले मीठे जल संसाधनों का सादर उपयोग करना जरूरी है।

जरूरत से ज्यादा मैकेनाईजेशन करने वाले चिन्तक कृपया एक बार फिर से सोचें कि क्या सौ करोड़ लोगों और सैंकड़ों करोड़ जानवरों की शक्ति को उसी प्रकार नष्ट हो जाते रहने देना चाहिए जिस प्रकार मीठे जल को? अगर नहीं तो विज्ञान और तकनीक के इस विकसित और फलते-फूलते काल में इस अपार मसल

(मॉसपेशियां) पॉवर और एनीमल (जानवर) पॉवर का इस्तेमाल क्यों न किया जाये। आदमी को केवल आराम ही नहीं चाहिए उसे काम भी चाहिए। आदमी को शारीरिक श्रम करना आवश्यक है। उसके बिना उसका शरीर रोगी बन जायेगा और अस्वस्थ जीवन या रोगी-काया से बढ़कर अन्य कोई दारूण दुख है ही नहीं। देखना सिर्फ यह है कि विज्ञान के विशिष्ट ज्ञान और टैक्नोलोजी की सहायता से कितना और कैसे इस शारीरिक बल और पशुधन का उपयोग किया जा सकता है। चुनौती दी है आम आदमी ने जुगाड़ बिठाकर। ऐसा ऑटोमोबाईल बनाया है 'जुगाड़' कि ग्रामीण अंचल की यात्री और माल ढोने की समस्या का अचूक साधन बना भी दिया, चला भी दिया है। एप्रोप्रीयेट टैक्नॉलाजी का एक अच्छा उदाहरण है। इतनी सस्ती और इतनी मजबूत यात्री और मालवाहक मोटर गाड़ी दुनिया में केवल भारत में ही बनी है। भारत में ही चली है! यह गांवों की कच्ची राहों पर फर्राटे से चलती है जहां दस पंचवर्षीय योजनाओं में तो सड़कें पहुंच नहीं पायी और शायद दसीयों साल आगे तक भी न पहुंच पायें। कोई विश्व संगठन, आई.एम.एफ., विश्व बैंक या यूनीडो आज तक भारत जैसे विकासशील देश की ऐसी विकट समस्या का ऐसा अचूक समाधान नहीं दे पाया जैसा जुगाड़ ने कर दिखाया। जुगाड़ जैसे नितान्त देसी विचार, नुस्खे और समाधान केवल आम भारतीय ही निकाल पाता है, नहीं तो दुनियां में फोर्ड से लेकर सुजुकी तक सारी कम्पनियां हैं और इनमें से ज्यादातर कई सालों से जुगाड़ के दर्शन लाभ कर रही हैं पर अभी तक एक भी मॉडल बाजार में नहीं उतार पाई हैं। भारतीय समस्याओं का भारतीय सोच के अनुसार समाधान करना जुगाड़ जैसे और भी कई क्षेत्रों में हुआ है। एक मोटर साईकिल को छोटे से ट्रैक्टर में बदला जा चुका है। इससे दस रूपये प्रति हैक्टेयर से कम का खर्चा पड़ता है। इसे दक्षिण अफ्रीका में भी प्रदर्शित किया गया है। स्वास्थ्य और इलाज के अनेक देसी उपाय लोगों की जानकारी में हैं। इन्हें सार्वजनिक करना जरूरी है। जच्चा-बच्चा स्वास्थ्य में आज भी डॉक्टरों को ये नुस्खे मात देते हैं। इन दृष्टांतों को मात्र इसलिए दिया गया कि जल उपयोग, जल भंडारण, जल संसाधन प्रबंधन, जल वितरण, जल रक्षण जैसे महत्वपूर्ण मसलों पर भी ध्यान दिया जा सके। जल नित की आवश्यकता है, इसलिए इस विषय में कार्यवाही बिना किसी देरी के शुरू हो जानी चाहिए।

जब हमारे भारत में अपनी सोच समझ से उपाय खोजने की क्षमता है, तो उन समस्याओं को तो सुलझायें जिन्हें सुलझा सकते हैं। जहां उपाय न हों वहां अन्य देशों के ज्ञान और उपकरणों आदि का अवश्य उपयोग किया जाना चाहिए। किन्तु जानबूझकर अपनी धरोहर, अपनी सम्पदा को उपयोग में न लाना या उसे क्षत-विक्षत करने का कुत्सित एवं निदंनीय प्रयास करना अक्षम्य सामाजिक अपराध है जिसके लिए बड़े से बड़ा दण्ड भी कम है। इसी प्रकार अपने पास ज्ञान, संसाधन, सम्पदा और क्षमता होने पर भी विदेशों की ओर ताकना कोई प्रशंसा योग्य काम नहीं है। इस देश में ही संभवतः निर्जला एकादशी जैसा पर्व होता है। मीठे जल के प्रति लोगों की चेतना जगाने के लिए ऐसे पर्व उतनी ही अहमियत रखते हैं जितने विश्व बाल दिवस, विश्व स्वास्थ्य दिवस आदि। भोजन और पानी की खपत का राशन करने की अनेक व्यवस्थाओं में निर्जल एकादशी भी एक है। विज्ञान तभी उपयोगी होता है जब आम आदमी की भाषा में इस तरह उस तक पहुंचाया जाये कि वह उसके दैनिक व्यवहार का, आचरण का हिस्सा बन जाये। जल, नदी, कुएं, ताल, तलैया सभी को हमारे यहां ' पवित्र' कहा गया है। इन्हें दूषित करना अपराध होता है। यह इस बात का प्रमाण है कि जल संसाधनों की रक्षा करनी होती है। पुलिस या अदालतें कम, और व्यक्ति की आत्मा ज्यादा अच्छी तरह इनकी सुरक्षा का दायित्व सम्हाल सकती हैं। जल सबके लिए उसी प्रकार निःशुल्क उपलब्ध है जिस प्रकार वायु,

आकाश, सूर्य की रौशनी और चांद की चांदनी। इन स्रोतों को प्रदूषित करने की छूट किसी को नहीं है।

हमारे पास तो पर्याप्त मीठा जल भी है और उसे एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंचाने के लिए हर आदमी और जानवर भी हैं। तिस पर यह राज्य/सरकार/शासन का पहला दायित्व है कि वो भारतवासी को पीने का मीठा जल उपलब्ध कराये। तो फिर देर किस बात की। काल करे सो आज कर, आज करे सो अब।